तृतीय खण्ड

श्रीरामकृष्ण श्रीविजया के दिन भक्तों के संग दक्षिणेश्वर में

प्रथम परिच्छेद

(चिन्मयी मूर्ति-ध्यान— मातृ-ध्यान)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में विराजमान हैं। समय 9 का होगा। छोटी खाट पर विश्राम कर रहे हैं। फर्श पर मणि बैठे हैं। उनके साथ बातें कर रहे हैं।

आज विजया। रविवार, 22 अक्तूबर, 1882 ईसवी। आश्विन शुक्ला, दशमी तिथि। आजकल राखाल ठाकुर के पास हैं। नरेन्द्र, भवनाथ बीच-बीच में यातायात करते हैं। ठाकुर के संग उनका भतीजा श्रीयुक्त रामलाल और हाजरा महाशय वास करते हैं। राम, मनोमोहन, सुरेश, मास्टर, बलराम— ये लोग भी प्राय: प्रति सप्ताह ठाकुर का दर्शन कर जाते हैं। बाबूराम ने अभी दो-एक बार दर्शन किया है।

श्रीरामकृष्ण— तुम्हारी पूजा की छुट्टियाँ हुई हैं?

मणि— जी, हाँ। मैं सप्तमी, अष्टमी और नवमी-पूजा के दिन केशवसेन के घर नित्य गया था।

श्रीरामकृष्ण— कहते क्या हो जी!

मणि— मैंने दुर्गा-पूजा की सुन्दर व्याख्या सुनी है।

श्रीरामकृष्ण— क्या सुना? बताओ, मैं सुनूँ ज़रा।

मणि— केशवसेन के घर रोज सुबह उपासना होती रही है, दस-ग्यारह बजे तक। उसी उपासना के समय उन्होंने दुर्गा-पूजा की व्याख्या की। उन्होंने कहा, 'यदि माँ को पा लिया जाए— यदि माँ दुर्गा को कोई हृदय-मन्दिर में ला सके— तो फिर तो लक्ष्मी, सरस्वती, कार्त्तिक, गणेश अपने-आप आ जाते हैं। लक्ष्मी अर्थात् ऐश्वर्य, सरस्वती अर्थात् ज्ञान, कार्त्तिक अर्थात् विक्रम, गणेश अर्थात् सिद्धि— ये समस्त अपने-आप ही आ जाते हैं, माँ यदि आ जाती हैं।

(ठाकुर श्रीरामकृष्ण के नरेन्द्रादि अन्तरंग)

श्रीयुक्त ठाकुर ने सारा विवरण सुन लिया और बीच-बीच में केशव की उपासना के सम्बन्ध में प्रश्न करते रहे। अन्त में कहने लगे—

''तुम यहाँ-वहाँ न जाओ, यहाँ पर ही आओगे।

''जो अन्तरंग हैं, वे केवल यहाँ पर ही आएँगे। नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल— ये मेरे अन्तरंग हैं। ये लोग सामान्य नहीं। तुम एक दिन इन्हें खिलाना। नरेन्द्र तुम्हें कैसा लगता है?''

मणि— जी, बहुत अच्छा।

श्रीरामकृष्ण— देखो, नरेन्द्र में कितने गुण हैं! गाना, बजाना, विद्या में (निपुण) और फिर जितेन्द्रिय है। कहता है— 'विवाह नहीं करूँगा'। बचपन से ही ईश्वर में मन है।

ठाकुर मणि के साथ और बातें करते हैं।

(साकार या निराकार—चिन्मयी मूर्ति-ध्यान— मातृ-ध्यान)

श्रीरामकृष्ण— तुम्हारा आजकल ईश्वर-चिन्तन कैसा हो रहा है? तुम्हें साकार अच्छा लगता है, या निराकार?

मणि— जी, साकार में अभी मन नहीं जाता। और फिर किन्तु निराकार में मन स्थिर नहीं कर सकता।

श्रीरामकृष्ण— देख लिया! निराकार में एकदम मन स्थिर नहीं होता। प्रथम-प्रथम साकार ही ठीक है।

मणि— मिट्टी की इन मूर्तियों का चिन्तन करना?

श्रीरामकृष्ण— क्यों! चिन्मयी मूर्ति।

मणि— जी, वैसा हो भी, तो हाथ-पाँव की कल्पना करनी होगी? किन्तु यह भी सोचता हूँ कि प्रथमावस्था में रूप-चिन्तन किए बिना मन स्थिर नहीं होगा, आपने कह दिया है। अच्छा, वे तो नानारूप धारण कर सकती हैं। अपनी माँ का रूप-ध्यान किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण— हाँ, वे (माँ) गुरु— ब्रह्ममयी स्वरूपा।

मणि चुप हैं। कुछ क्षण बाद फिर और जिज्ञासा ठाकुर से करते हैं—

मणि— जी, निराकार में किस प्रकार दिखाई देता है? वह क्या वर्णन किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण *(कुछ सोचकर)*— वह किस प्रकार है, जानते हो!

यह बात कहकर ठाकुर थोड़ा चुप रहे। तत्पश्चात् साकार-निराकार-दर्शन की किस प्रकार से अनुभूति होती है— एक विशेष कथा बतला दी। और फिर ठाकुर चुप रहे।

श्रीरामकृष्ण— बात है, इसको विशेष ठीक तरह से जानने के लिए साधना चाहिए। कमरे के भीतर के रत्न यदि देखना चाहो, और लेना चाहो, तो फिर परिश्रम करके चाबी लाकर दरवाजों का ताला खोलना होगा। तब फिर रत्न बाहर निकालकर लाने चाहिएँ। वैसा न करो तो फिर ताला लगा हुआ कमरा है— द्वार के निकट खड़ा हुआ सोचता हूँ, 'यह मैंने दरवाजा खोल लिया, सन्दूक का ताला तोड़ लिया, यह रत्न बाहर निकाल लिया।' केवल खड़े-खड़े सोचने से तो होता नहीं। साधना करनी चाहिए।

द्वितीय परिच्छेद

ठाकुर अनन्त और अनन्त ईश्वर— सब ही पन्थ— श्रीवृन्दावन-दर्शन

(ज्ञानी के मत में असंख्य अवतार— कुटीचक— तीर्थ क्यों ?)

श्रीरामकृष्ण— ज्ञानीगण निराकार-चिन्तन करते हैं। वे अवतार नहीं मानते। अर्जुन श्रीकृष्ण का स्तव करते हैं, 'तुम पूर्ण ब्रह्म हो।' कृष्ण ने अर्जुन से कहा, 'मैं पूर्ण ब्रह्म हूँ कि नहीं, देखोगे ?' आओ। यह कहकर एक जगह ले जाकर बोले, 'तुम क्या देख रहे हो ?' अर्जुन ने कहा, 'मैं एक वृहत् वृक्ष देख रहा हूँ, उस पर गुच्छे के गुच्छे काले जामुन जैसा फल लगा हुआ है।' कृष्ण बोले, 'और निकट आकर देखो कि ये गुच्छे के गुच्छे काला फल नहीं है, गुच्छे के गुच्छे असंख्य कृष्ण फले हुए हैं, मेरी तरह'— अर्थात् उसी पूर्णब्रह्म रूप वृक्ष से असंख्य अवतार हुए जा रहे हैं।

''कबीरदास की निराकार के ऊपर लगन थी। कृष्ण की बात पर कबीरदास कहते, 'उनको क्या भजूँगा ? गोपियाँ तालियाँ बजातीं और वे बन्दर-नाच नाचते थे।' *(सहास्य)*। मैं साकारवादी के निकट साकार और फिर निराकारवादी के निकट निराकार।''

मणि *(सहास्य)*— जिनकी बातें हो रही हैं, वे (ईश्वर) भी जैसे अनन्त हैं, आप भी वैसे ही हैं अनन्त ! आपका अन्त नहीं मिलता।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— तुमने समझ लिया है ! बात क्या है, जानते हो ?— सब धर्म एक बार कर लेने चाहिएँ। सब पथों द्वारा चलकर आ जाना चाहिए। खेल की गोटी सारे घरों को पार किए बिना क्या पकती है ? गोटी जब पक्की हो जाती है, तब उसे कोई पकड़ नहीं सकता।

मणि— जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण— योगी दो प्रकार के हैं, बहूदक और कुटीचक। जो साधु बहुतीर्थ करता फिरता है— जिसके मन में अभी भी शान्ति नहीं हुई, उसे बहूदक कहते हैं। जिस योगी ने सब जगह घूमकर मन स्थिर कर लिया है,

जिसको शान्ति हो गई है, वह एक जगह आसन करके बैठ गया है— फिर नहीं हिलता। उसी एक स्थान पर बैठने में ही उसे आनन्द है। उसको तीर्थ पर जाने का कोई प्रयोजन ही नहीं होता। यदि वह तीर्थ जाता भी है तो केवल उद्दीपन के लिए। इसे कुटीचक कहते हैं।

''मुझे सब धर्म एक बार कर लेने पड़े थे— हिन्दू, मुसलमान, क्रिश्चियन। और फिर शाक्त, वैष्णव, वेदान्त आदि इन सब पथों द्वारा भी आना पड़ा है। देखा, वही एक ईश्वर— उनके पास ही सब आ रहे हैं— भिन्न-भिन्न पथों द्वारा।

''तीर्थों पर गया तो एक-एक बार भारी कष्ट हुआ। काशी में सेजोबाबुओं (मथुरबाबू-परिवार) के संग राजा-बाबुओं की बैठक में गया। वहाँ पर देखा, वे लोग विषय की बातें कर रहे हैं— रुपया, जमीन इत्यादि की बातें। बातें सुनकर मैं रोने लगा। बोला, 'माँ, कहाँ पर ले आई हो! दक्षिणेश्वर में तो मैं अच्छा था।' प्रयाग में देखा— वही तालाब, वही दूर्वा, वही वृक्ष, वही इमली के पत्ते! केवल अन्तर— पश्चिम (उत्तर प्रदेश, बंगाल के पश्चिम) के लोगों का भूसी की तरह बाह्य। *(ठाकुर और मणि का हास्य)*।''

''तथापि तीर्थ पर उद्दीपन तो चाहे होता ही है। मथुरबाबू के संग वृन्दावन गया। मथुरबाबू के घर की स्त्रियाँ भी थीं, हृदय भी था। कालीय-दमन घाट देखने मात्र से ही उद्दीपन हो जाता, मैं विह्वल हो जाया करता। हृदे मुझे यमुना के उसी घाट पर बच्चे की भाँति नहलाता।

''यमुना के तीर पर सन्ध्या के समय टहलने जाता। यमुना की रेती से उस समय चरागाह (चौने) से गउएँ लौटती हुई आतीं। देखने मात्र से ही मुझे कृष्ण का उद्दीपन हुआ, उन्मत्त की न्यायीं मैं दौड़ने लगा, 'कृष्ण कहाँ, कृष्ण कहाँ'— यह बोलते-बोलते।

''पालकी द्वारा श्यामकुण्ड, राधाकुण्ड के मार्ग से जा रहा था। गोवर्धन को देखते ही उतर गया। उसे देखते ही एकदम विह्वल होकर, दौड़कर गोवर्धन के ऊपर जाकर खड़ा हो गया और बेहोश हो गया। तब ब्रजवासी मुझे उतार लाए। श्यामकुण्ड, राधाकुण्ड के मार्ग के वे ही मैदान, पेड़-पौधे,

हिरण!— समस्त देखकर विह्वल हो गया। चक्षुओं के जल से कपड़े भीगने लगे। मन में होने लगा 'ओ कृष्ण, सब कुछ ही है, केवल तुझे ही नहीं देख पा रहा हूँ।' पालकी के अन्दर बैठा रहा, किन्तु एक बार भी एक भी बात कहने की शक्ति नहीं रही, चुप बैठा रहा! हृदय पालकी के पीछे आ रहा था। कहारों से कह दिया था 'खूब होशियार' रहें।

''गंगामायी बड़ा यत्न करती थी। बहुत उमर थी। निधुबन के निकट कुटीर में अकेली रहती थी। मेरी अवस्था और भाव देखकर कहती— ये साक्षात् राधा देह धारण करके आई हैं। मुझे 'दुलाली' कहकर पुकारती! उसको पा लेने पर मेरा खाना-पीना, वासस्थान पर लौटना आदि भूल जाता। हृदय कभी-कभी वासस्थान से आहार लाकर खिला जाता। वह भी खाने की चीजें तैयार करके खिलाती।

''गंगामायी को भाव होता। भाव देखने के लिए लोगों का मेला लग जाता। भाव में एक दिन हृदय के कन्धे पर चढ़ गई थी।

''गंगामायी के पास से देश आने की मेरी इच्छा नहीं थी। सब ठीक हो गया था। मैं सिद्ध चावलों का भात खाऊँगा, गंगामायी का बिछौना कमरे के इस ओर होगा, मेरा बिस्तर उस ओर होगा। सब ठीक हो गया था। हृदय ने तब कहा, 'तुम्हारे पेट में इतनी तकलीफ है, कौन देखेगा?' गंगामायी बोली, 'क्यों, मैं देखूँगी, मैं सेवा करूँगी।' हृदय एक हाथ पकड़ कर खींच रहा था और गंगामायी एक हाथ पकड़ कर खींच रही थी— ऐसे समय माँ की स्मृति आ गई। माँ तो अकेली वहाँ दक्षिणेश्वर-कालीबाड़ी की नहबत में हैं। फिर वहाँ रहना नहीं हुआ। तब कहा— 'नहीं, मुझे जाना ही होगा!'

''वृन्दावन का वह सुन्दर भाव था। नए यात्री के जाने पर व्रज-बालकगण कहते हैं— 'हरि बोलो, गठरी खोलो'!''

ग्यारह बजे के बाद ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने माँ काली का प्रसाद ग्रहण किया। मध्याह्न में थोड़ा विश्राम करके अपराह्न को फिर भक्तों के संग कथावार्त्ता में व्यतीत करते हैं, केवल बीच-बीच में एक-एक बार प्रणव-ध्वनि अथवा 'हा चैतन्य'— यह नाम उच्चारण करते हैं।

ठाकुर-मन्दिर में सन्ध्या-आरती हो गई। आज विजया। श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर में आए हैं, माँ को प्रणाम के बाद भक्तों ने उनकी पदधूलि ग्रहण की। रामलाल ने माँ काली की आरती की है। ठाकुर रामलाल को सम्बोधन करके कहते हैं, ''ओ रामनेलो! कहाँ हो रे।''

माँ काली को सिद्धि निवेदन की गई है। ठाकुर उसी प्रसाद को स्पर्श करेंगे— इसलिए रामलाल को पुकार रहे हैं। और सब भक्तों को थोड़ी-थोड़ी देने के लिए कह रहे हैं।

तृतीय परिच्छेद

(दक्षिणेश्वर-मन्दिर में बलराम आदि के संग में— बलराम को शिक्षा। लक्षण— सत्य वाणी— सर्वधर्मसमन्वय— 'कामिनी-काञ्चन ही माया')

मंगलवार, अपराह्न, 24 अक्तूबर। समय 3-4 का होगा। ठाकुर आहार के ताख (कट्टे) के निकट खड़े हैं। बलराम और मास्टर कलकत्ता से एक गाड़ी में आए हैं और प्रणाम कर रहे हैं। प्रणाम करके बैठने पर ठाकुर हँसते-हँसते कहते हैं :

''ताख के ऊपर खाने को लेने गया था। आहार में हाथ ज्यों ही देता हूँ, त्यों ही छिपकली गिर पड़ी— और झट छोड़ दिया।'' *(सब का हास्य)*

श्रीरामकृष्ण— हाँ भई, यह सब मानना चाहिए। यही देखो न, राखाल का असुख! मेरे ही हाथ-पाँव दर्द करते हैं। हुआ क्या, पता है? मैंने बिछौने से उठने के समय 'राखाल आ रहा है', याद करके अमुक का मुख देख लिया था! *(सब का हास्य)* हाँ जी, लक्षण देखने चाहिएँ। उसी दिन नरेन्द्र एक काणा लड़का ले आया था, उसका मित्र था वह। चक्षु पूरा काणा नहीं था, जो भी हो मैंने सोचा, 'यह फिर कैसा संयोग हुआ!'

''और एक व्यक्ति आता है, मैं उसकी वस्तु खा नहीं सकता। वह ऑफिस में कर्म करता है। उसे 20 रुपये। महीना मिलता है और 20 रुपये। मिथ्या बिल (bill) से बनाता है। झूठी बात कहता है। इस कारण उसके

आने पर बहुत बातें नहीं करता। शायद दो-चार दिन ऑफिस ही नहीं जाता, यहाँ पर पड़ा रहता है। बात क्या है, जानते हो? चाहता है कि किसी से कहकर अन्य जगह कर्म मिल जाए।''

बलराम का वंश परम वैष्णव वंश है। बलराम के पिता वृद्ध हो गए हैं— परम वैष्णव हैं। सिर पर शिखा, गले में तुलसी की माला, और हाथ में सर्वदा ही हरिनाम की माला। जप करते रहते हैं। इनकी उड़ीसा में बहुत-सी जमींदारी है। और कोठार में, श्रीवृन्दावन में, और भी अन्य अनेक स्थानों पर श्री श्रीराधाकृष्ण-विग्रह की सेवा है और अतिथिशालाएँ हैं। बलराम नूतन आने लगे हैं। ठाकुर बातों ही बातों में उनको नाना उपदेश देते हैं।

श्रीरामकृष्ण— उस दिन अमुक आया था। सुना है, शायद उसी काली स्त्री का गुलाम है। ईश्वर के दर्शन क्यों नहीं होते? कारण, कामिनी-काञ्चन बीच में ओट (आवरण) बने रहते हैं और तुम्हारे सम्मुख कैसे यह बात कही कि मेरे पिता के पास एक परमहंस आए थे। पिता ने उसे मुर्गी पकाकर खिलाई। *(बलराम का हास्य)*। 'मेरी अवस्था' अब ऐसी है कि मछली का झोल माँ का प्रसाद हो तो तनिक-सा खा सकता हूँ। माँ का प्रसाद माँस अब नहीं खा सकता— तथापि उँगली से तनिक-सा चखता हूँ, पीछे माँ क्रोध न करें। *(सब का हास्य)*।

(पूर्वकथा— वर्धमान के पथ पर— देशयात्रा— नकुड़ाचार्य का गाना-श्रवण)

''अच्छा! मेरी यह कैसी अवस्था है? तनिक बताओ। वर्धमान से होकर उस देश (कामारपुकुर) को बैलगाड़ी में जा रहा था। उस समय झड़-तूफान-वर्षा होने लगी और गाड़ी के साथ कहीं से लोग आकर जमा हो गए। मेरे संगी व्यक्तियों ने बताया, ये डाकू हैं। मैं तब ईश्वर का नाम करने लगा। किन्तु कभी राम-राम कहता था, कभी काली-काली, कभी हनुमान-हनुमान— सब तरह से ही कहता हूँ। यह कैसी बात है, ज़रा बताओ तो।''

ठाकुर क्या यह बात बता रहे हैं कि ईश्वर एक हैं, उनके नाम असंख्य हैं, भिन्न धर्मावलम्बी अथवा सम्प्रदाय के लोग मिथ्या विवाद करके मरते हैं ?

श्रीरामकृष्ण *(बलराम के प्रति)*— कामिनी-काञ्चन ही माया है। उसके भीतर कुछ दिन रहने से होश चली जाती है। मन में बोध होता है कि अच्छा हूँ। मेहतर गू का बर्तन उठाता है। उठाते-उठाते फिर घृणा नहीं रहती। ईश्वर का नाम-गुण-कीर्त्तन करने का अभ्यास कर लेने पर ही क्रमश: भक्ति होती है।

(मास्टर के प्रति)— उससे लज्जा नहीं करते। 'लज्जा, घृणा, भय तिन थाकते नय।' (लज्जा, घृणा, भय— इन तीन के रहते नहीं होता— ईश्वर-दर्शन, ईश्वर-लाभ)।

''उस देश में सुन्दर कीर्त्तन-गान है— खोल बजाकर कीर्त्तन होता है। नकुड़ाचार्य का गाना तो बड़ा ही सुन्दर है। तुम लोगों की वृन्दावन में सेवा है ?

बलराम— जी हाँ। एक कुञ्ज है— श्यामसुन्दर की सेवा।

श्रीरामकृष्ण— मैं वृन्दावन में गया था। निधुवन सुन्दर स्थान है।

श्री महेन्द्रनाथ गुप्त 'श्री म'
(14-7-1854 — 4-6-1932)